REVIEW OF RESEARCH

पीड़ा को आनंदित करते बच्चन के मधुकाव्य

कुसुमलता प्रजापति,[1] डॉ. ऑचल श्रीवास्तव[2]

[1]अनुसंधित्सु, हिन्दी विभाग, डॉ.सी.वी.रमन युनिवर्सिटी कोटा बिलासपुर (छ.ग.).
[2]विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, डॉ.सी.वी.रमन युनिवर्सिटी कोटा बिलासपुर (छ.ग.).

ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 8 | MAY - 2019

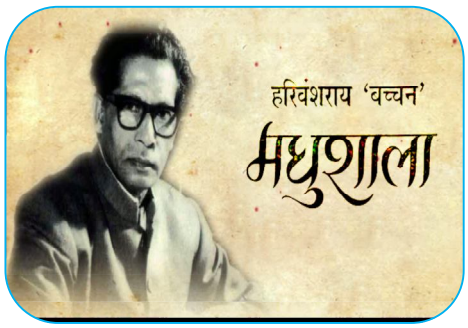

सारांश –

''काव्य में पीड़ा का विशेष महत्व है, जहॉ कविता की प्रथम पंक्तियों का उत्स ही करूणा से है, वहां समस्त हिन्दी काव्य में वेदना का महत्व अप्रतिम है। सृजन के मूल में ही पीड़ा है, चाहे इस भव जगत में प्राणी का जन्म हो या कविता का।'' पीड़ा में मज्जित महादेवी वर्मा जी का यह कथन सारगर्भित है। दुःख से सराबोर निराला कहते हैं – '' दुःख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूं जो अब तक नहीं कही।'' मस्तिष्क में घनीभूत पीड़ा लिये प्रसाद के अनुसार – '' वेदने तू भी भली '' और दुख के शोधक अज्ञेय ने कहा – दुःख सबको मॉजता है'' तो दुःख का सृजन से सदा ही सरोकार रहा है। इसी तरह हरिवंष राय बच्चन जी के मधुकाव्यों में भी पीड़ा की गहन अनुभूति है।

बच्चन के मधुकाव्य अर्थात मधुशाला, मधुबाला और मधुकलश सभी में कवि के भाव, अंगूर रूपी मृदु भावों से आसवित मदिरा के समान है जिसे पाठक गण पीकर झूम उठते है, बार–बार आकंठ पीने के अभिलाशी हो जाते हैं, उस मदिरा के निर्माण में कवि का ह्रदय कितना दग्ध हुआ, यह तो कवि – ह्रदय ही समझ सकता है। मदिरा और मधुशाला के मर्म को उद्घाटित करती मधुशाला की यह रूबाई दृष्टव्य है –

लाल सुरा की धार लपट सी
कह न इसे देना ज्वाला,
फेनिल मदिरा है मत इसको
कह देना उर का छाला,
दर्द नशा है इस मदिरा का
विगत स्मृतियॉ साकी हैं;
पीड़ा में आनंद जिसे है
आये मेरी मधुशाला।[1]

पीड़ा में आंनदित करती बच्चन की यह जीवन मदिरा वास्तव में अद्वितीय है। इस मदिरा का व्यसन दर्द है, पीड़ा है। बच्चन का यूं तो समस्त जीवन ही उनके काव्य में उभरा है उनकी काव्य यात्रा पर दृष्टिपात करने पर उनका सारा जीवन ही उसमें प्रतिबिंबित होता है पर किसी रचनाकार या कवि का प्रतिबिंब उसके रचना में होना कोई असामान्य बात नही है किंतु जब रचनाकार के आइने में हर दर्शक को भी अपना प्रतिबिंब नजर आने लगे तो वह अवश्य ही असामान्य है और इसी असाधारणता के धनी है कविवर बच्चन। उमर खैयाम की रूबाईयों से प्रभावित होकर जब उन्होंने खुद अनुवाद करने का निश्चय किया तो खैयाम के भावनाओं से इस तरह एकाकार हुए कि उन्ही प्रतीकों के माध्यम से उन्होंने अपनी 'मधुशाला' का महल तैयार कर लिया। इसी 'मधुशाला' से उन्हें अप्रतिम ख्याति मिली। इस अप्रतिम ख्याति की नींव भी उतनी ही गहरी और दृढ़ है जितना ऊंचा उनका महल। खैयाम की रूबाईयों को तो औरों ने भी अनुवाद किया पर शायद भाव विदग्धता की पराकाष्ठा को बच्चन ने ही पार किया तभी वो जन मन में अपनी भावनाओं को पहुॅचा पाए। बच्चन जनता की जरूरत को बहुत अच्छी तरह समझते थे इसलिए उन्होंने जनता के अनुरूप और समय के अनुरूप अपनी कलम चलाई और सिर्फ कलम ही नहीं चलाई अपना कंठ भी चलाया है उनकी जनप्रियता का आधार केवल शब्द नहीं बल्कि वे ध्वनियां भी है जिनका उच्चारण उन्होंने अपने कंठ

से किया। शब्दों के जादू के साथ अपनी आवाज का जादू भी उन्होंने बिखेरा। इस प्रकार शब्द और ध्वनि दोनो के समुचित समन्वय से उन्होने स्वयं को और पाठकों, श्रोताओं की पीड़ा को आनंदित किया।

बच्चन की पूर्व पत्नी श्यामा ने बच्चन बहुत पहले ही समझ लिया था, इसलिए उन्हें वे सफरिंग (Suffering) कहती थीं। श्यामा को कवि की वेदना का गहरा ज्ञान था । पीड़ा के संबंध में एक बात तो बिल्कुल सत्य है कि पीड़ा के बिना मनुष्य का दंभ नही टूटता और दंभ के टूटे बगैर एक आदमी दूसरे आदमी के दिल तक नहीं पहुंच पाता , आदमी–आदमी को जोड़ने वाला कोई तार नहीं बन पाता। विचारों के तार तो बिना दंभ के जुड़ भी सकता है किंतु भावों के तार दंभ का नाश किए बगैर नहीं जुड़ सकता। मुक्तिबोध के शब्दों में पान चबाऊ संतुष्ट मुख मुद्रा वाले लोग भले ही गाल बजा लें किंतु कविताई कदापि नहीं कर सकते। संघर्ष का सान्निध्य और सौभाग्य सिर्फ कवि को प्राप्त होता है तो अवश्य ही यह ईश्वरीय अनुग्रह होता है, अन्यथा साधारण जन की भांति पीड़ा और दुख के आघात से शायद वह भी टूट जाता किंतु कवि के ह्रदय को ईश्वर वेदनाओं को सहने के लिए वज्र सा बना देता है। वही ह्रदय जब भावों से सिक्त होता है तो अपने कोमलतम रूप में प्रकट होता है। कवि का काम भावनाओं के पुल बनाने से अधिक स्वयं पुल बन जाने पर निर्भर होता है इसलिए विज्ञ जनों का कहना है कि कवि पैदा होते हैं, निर्मित नहीं होते। कविता की दुःसाध्य के विषय को बच्चन स्वयं अनुभूत करते हुए कहते है कि कविता लिखने का विषय उतना नहीं जितना जीने का है और कविता जीना, जीने का सबसे दुःसाध्य रूप है। कविता की दुःसाध्यता को बच्चन बिल्कुल वही समझते है जो कबीर ने कहा है –

सीस काटि भुई पै धरै, तापर धारै पांव,
दास कबीरा यों कहैं ऐसा होउ तौ आव।[2]

इन पंक्तियों के मर्म को समझाते हुए बच्चन कहते है कि शीष काटना तो शायद संभव हो भी जाए पर उसको उठाकर भूमि पर रखना और फिर उस पर पांव रखना तो तभी संभव हो सकता है जब कोई मृत्योपरांत भी जीवित रहे या जीने की चेतना अपने हाथों में बचाये रखे। अहं के काटने बाद जो चेतना शीष को उठाती है, उस पर पांव धरती है, उसी का नाम कवि है। बच्चन की इन वक्तव्यों का आशय कवि को वेदना की आवश्यकता से है और वह वेदना अहं के नाश के लिए है। इस अहं के नष्ट करने के लिए उनकी खुद की पंक्तियां बड़ी मार्मिक और समीचीन है –

मै कुंभकार की चाक चढ़ी
फिर मेरे तन पर बेलि कढ़ी
तब गयी चिता पर मैं रखी,
हर ओर अग्नि की ज्वाला बढ़ी

जल चिता गयी हो राख–राख
मैं मिट्टी किंतु रही बाकी।
मैं एक सुराही मदिरा की।[3]

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने शायद अपने आपको ही सुराही के माध्यम से प्रस्तुत किया है कि कवि किन ह्रदय विदारक पीड़ा से तपता है, फिर अपनी चेतना को मिट्टी में सुरक्षित करके सुराही सदृश आकार पाता है।

मै तू, तेरा–मेरा का द्वैत भी समाज में हावी रहा है, और इस द्वैत ने कालांतर मे सुरसा की तरह विकराल होकर साम्प्रदायिकता का रूप धारण कर लिया। मुनष्य का भेद जाति के आधार पर होने लगा, धर्म के आधार पर होने लगा, यहां तक की भूमि के आधार पर भी कुदरत की बख्शी हुई एक धरती भारत, ईरान, पाकिस्तान में बदल गई। इस बॅटी हुई तू–तू मैं –मैं की लडाई को खत्म करने का और विष्व में मानव जाति

को एक करने के लिए कवि ने हाला, प्याला, मधुशाला का क्या उत्तम दृष्टांत लिया है कि समस्त पाठक बरबस ही आंनद से झूमने पर विवष हो जाते हैं –

'मैं करके शुद्ध दिया अब नाम गया उसको हाला
मीना को मधुपात्र दिया, सागर को नाम गया प्याला ,
क्यों न मौलवी चौके, बिचकें तिलक– त्रिपुण्डी पण्डित जी
'मैं – महफिल अब अपना ली है मैने करके मधुशाला

बच्चन की मधुशाला की अप्रतिम ख्याति का एक विशेष कारण उसकी गेयता है, उसकी रूबाई है। श्रोताओं के आग्रह के बच्चन ने कवि सम्मेलनों में अक्सर 'मधुशाला' को सुनाया है किन्तु 'मधुशाला' के बाद 'मधुबाला' और 'मधुकलश' में भी पाठकों को असीम आनंद से भरने की क्षमता है। 'मधुबाला' में मधुबाला, मालिक – मधुशाला, मधुवायी, सुराही, प्याला, हाला, प्यास, बुलबुल पाटल का परिचय और अंत में आत्म परिचय के साथ समापन अदभुत है। आत्म परिचय का हर चतुष्पद सिर्फ एक कवि विशेष का परिचय नही है वरन् उस सारे कवियों का परिचय है जो जगत का हलाहल पीकर जग को अमृत का दान करते है। हर पद में अमरता और आनंद की अभिव्यक्ति है यथा –

'मै निज रोदन में राग लिये फिरता हूं
शीतल वाणी में आग लिये फिरता हूं
हो जिस पर भूपों के प्रासाद निछावर,
मैं वह खण्डहर का भाग लिए फिरता हूं

'मधुबाला' के पश्चात् 'मधुकलश' की रचना हुई। 'मधुकलश' मधु से भरा हुआ घट नहीं है। 'मधुकलश' की रचना तक मधु के कलश से मधु रीतने लगा, उसमें हलाहल भी ढरने लगा। कवि के उल्लास, उत्साह की मदिरा की सुराही अब लुढ़क गई थी। मधुकलश में मधुकलश, कवि की वासना सुषमा, कवि की निराशा, हरियाली, कवि का गीत, पथ भ्रष्ट, कवि का उपहास, मांझी लहरों का निमंत्रण, मेघदूत के प्रति और गुलहजारा नामक गीतों का संकलन है। मधुकलश में भरने और रीतने की अनवरत् प्रक्रिया का दर्शन तथा परिवर्तन के अटल नियम को कवि ने पाठको की भावनाओं से एकाकार किया है और श्रेष्ठ कवि की सफलता का पर्याय हैं –

'गिरि में न समा उन्माद सका तब झरनों में बाहर आया,
झरनों की ही थी मादकता जिसको सर सरिता ने पाया,
जब संभल सका उल्लास नहीं नदियों से अम्बुधि को आयी,
अंबुधि की उमड़ी मस्ती को नीरद ने भू पर बरसाया।

'मधुकलश' की भांति 'कवि की वासना' नामक गीत में कवि की घनीभूत अनुभूतियां अभिव्यक्ति हुई है जिसे जग वासनामय कहकर खारिज करता है। कवि की यह वासना गीत बनकर पाठकों को अति प्रिय हो गई। जीवन में विषम परिस्थितियों से लगभग हर व्यक्ति गुजरता है। जीवन के सुखद –दुखद अनुभूतियों में दुख के क्षण ही याद रह जाते है। मानव की स्मृति में बार –बार उभरकर शूल की तरह चुभते है किन्तु यह दुःखद घड़ियां दुसरे के दु'खद घड़ियों से मिलते है या कोई जब अपनी पीड़ा में परायों की पीड़ा को भी समा लेता है तो उस मनोविकार का विरेचन हो जाता है या दूसरे शब्दों में पीड़ा का विशेषत्व समाप्त हो जाता है। वही पीड़ा करूण रस के आनंद में परिणत हो जाती है। कवि की वासना भी कुछ इसी रूप में पाठकों के सामने प्रस्तुत है –

'थी तृषा जब शीत जल की खा लिये अंगार मैने,
चीथड़ों से उस दिवस था कर लिया श्रृगांर मैने,
राजसी पट पहनने की जब हुई इच्छा प्रबल थी,
चाह –संचय में लुटाया था भरा भण्डार मैने।
वासना जब तीव्रतम थी बन गया था संयमी मैं,
है रही मेरी क्षुधा ही सर्वदा आहार मेरा।
कह रहा जग वासनामय हो रहा उद्‌गार मेरा।[7]

'मधुकलश' के 'कवि का उपहास' नामक कविता में कविवर बच्चन कवि की आह को जगत के दृष्टिकोण से बताने का प्रयास कर रहे है कि कवि की भावनाओं का जग ने अक्सर माखौल उड़ाया है। सामाजिक परिवेश अक्सर कवि के स्वच्छंद विचारों का बांधने का प्रयास करता है , उसके सृजन को हॅसी में उड़ाकर उसके कलम को अवरूद्ध करने का प्रयास करता है जब कि दुःखद क्षणों में प्रकृति की संवेदना भी कवि के साथ है किन्तु मनुष्य होने के नाते कवि भी मानवीय संवेदना को पाने का अभिलाषी है फिर कवि अपने उद्‌गार को पाठकों से साझा करने को उद्यत है कि शायद उसे वहॉ से संवेदना मिल जाये इसके बाद खुद को सांत्वना देते हुए कवि कहता है –

है नहीं निष्फल कभी यह गीतमय अस्तित्व मेरा,
प्रतिध्वनित यदि एक उर में एक क्षीण कराह मेरी।[8]

बच्चन का यह आश्वासन ये ध्वनियां आज बहुत बड़े पाठक वर्ग के उर में प्रतिध्वनित हो रही है। बच्चन के काव्य की सफलता , पीड़ा की नींव पर ही आधृत है। इस पीड़ा में नशा है क्योंकि पाठकों को कवि की पीड़ा में अपनी पीड़ा दिखी। मधुकाव्यों में दर्द का नषा मादकता में तब्दील हो गया है और वह मादकता कुछ कर गुजरने की तमन्ना जगा गई है। मधुकाव्यों के पश्चात कवि के वैयक्तिक जीवन में कई विषम परिस्थितियां आई जिससे कवि के मानस पर गहरा प्रभाव डाला और फिर यही पीड़ा विषाद के क्षणों में हिन्दी जगत को 'निषा निमंत्रण', 'एकांत संगीत' और 'आकुल अंतर' जैसे, अनुपम गीत देकर हिन्दी काव्य ही यश में वृद्धि की। कवि के लिए दुःख, चिंता, विषाद से निकलने का एकमात्र उपाय सृजन ही होता है, उसका व्यथित पीड़ित मन अपने सारे विषाद अवसादों को संचित कर उसे सालते रहते हैं और जब सघनतम रूप में बरसने को आतुर हो जाती हैं तब वह स्वमेव ही निःसृति का मार्ग खोज लेती है और कविता के माध्यम से निःसृत होकर कवि को मुक्त करती है, आनंदित करती है। कविवर बच्चन ने त्याज्य और अखाद्य मदिरा व मदिरालय में उदात भावों दर्षन करा दिया । उन्होंने भूख में भविष्य की उर्वराषक्ति को पहचान लिया, तो ऐसे कवि का श्रम, संघर्ष क्यों न पाठकों को आनंदित करे, क्यों न ये पीड़ा पाथेय बने।

संदर्भ

1. बच्चन हरिवंशराय, बच्चन 'मधुशाला', हिन्द पॉकेट बुक्स संस्करण 2008, पृ0–24
2. बच्चन हरिवंशराय, 'क्या भूलूं ,क्या याद करुं', राजपाल एण्ड सन्स 2016 पृ0–192
3. सं. अजित कुमार, बच्चन रचनावली भाग–1, राजकमल प्रकाशन 2017 पृ0–मधुबाला/93
4. मधुशाला, हरिवंशराय, बच्चन हिन्द पॉकेट बुक्स संस्करण 2008, पृ0–63
5. 'मधुबाला'/बच्चन रचनावली – 1/सं. अजित कुमार/पृ.क्र–112
6. 'मधुकलश '/बच्चन रचनावली – 1/सं. अजित कुमार/पृ.क्र–126
7. 'मधुकलश'/बच्चन रचनावली – 1/सं. अजित कुमार/पृ.क्र–137
8. 'मधुकलश'/बच्चन रचनावली – 1/सं. अजित कुमार/पृ.क्र–140